Research Paper | Environmental | E-ISSN : 2455-295X | Volume : 1 | Issue : 1 | Nov 2015

प्राचीन भारत में आर्थिक भूगोल की अवधारणा :एक विश्लेषण

डॉ. आर.एन. बैरवा[1]

[1] एसोसिएट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, गवर्नमेंट कॉलेज, मालपुरा (टोंक), राजस्थान।

ABSTRACT

मानव सभ्यता एवं संस्कृति की प्रारंभिक अवस्था में यद्यपि भूगोल की विभिन्न शाखाओं का विभाजन भौतिक, आर्थिक अथवा मानव भूगोल के रूप में नहीं हुआ था, किन्तु इस दौरान भी भौगोलिक ज्ञान का कोष रिक्त नहीं था और भूगोल की सभी शाखाओं से सम्बन्धित तथ्यों का विवेचन भारतीय मनिषियों द्वारा अपने-अपने ग्रन्थों में किया गया है। इन तथ्यों का अध्ययन एवम् विश्लेषण कर पाश्चात्य विद्वान (यूरोपिय एवम् अमेरीकी) विद्वान भी आश्चर्य चकित रहे हैं कि उस प्राचीन युग में जबकि अमेरीका में तो मानव विकास का कोई नामो-निशान ही नहीं था और यूरोपीय देशों के निवासी भी गुफाओं में रहकर आदिम जीवन व्यतीत करते थे. तब आर्य भारतीय लोग विकसित नगरीय सभ्यता का जीवन व्यतीत करते थे तथा तत्कालीन भारतीय मनीषी उच्चकोटि के कृषक, शिल्पकार, व्यापारी एवम् अभियान्त्रिक थे। इनके द्वारा किये गये कार्यों की पुष्टि न केवल ग्रन्थों में वर्णित तथ्यों से, बल्कि प्राप्त प्राचीन अवशेषों से भी हो जाती है।

जहाँ तक प्राचीन भारत में आर्थिक भूगोल से सम्बन्धित विद्वानों की बात है तो इस सन्दर्भ में भी यही कहा जा सकता है कि जिन भारतीय मनीषीयों के ग्रंथों में आर्थिक भूगोल से सम्बन्धित तथ्यों का विवचेन एवम् विश्लेषण किया गया है, उन्हें ही हम प्राचीन भारतीय आर्थिक भूगोलवेत्ता मान सकते हैं। इस तरह प्राचीन भारतीय आर्थिक भूगोल वेत्ता के रूप में बृहस्पति, शुक्र, कामन्दक, कौटिल्य, कालिदास, बाल्मिकी, व्यासमुनि, पाणिनी, मनु, एवम् पातंजलि आदि भारतीय मनीषियों का नाम स्मरणीय है।

Key words: प्राचीन भारत, आर्थिक भूगोल, बृहस्पति, शुक्र, कामन्दक, कौटिल्य, कालिदास, बाल्मिकी, व्यासमुनि।

आर्थिक भूगोल की अवधारणा :-

मानव मस्तिष्क विचारों का केन्द्र है और विचारों के माध्यम से ही मानव चेतना का विकास होता रहता हैं। वह आर्थिक सामाजिक एवम् धार्मिक भावनाओं को साकार बनाती है उसे क्रियाशील बनाती है, एवं सिद्धान्त रूप में परिणीत कर देती है। प्राचीन भारत में आर्थिक भूगोल के विकास का क्रम कुछ भी ऐसे ही मानव चेतना से निर्मित समाज की संरचना एवं परिस्थितियों का प्रतिरूप है। आर्थिक भूगोल की कल्पना समय एवं परिस्थितियों के अनुकूल सदैव परिवर्तित होती रही है एवं इनके आकार-प्रकार में निरन्तर विकास और परिवर्तन होता रहा है। प्राचीन भारत में आर्थिक भूगोल को वर्तमान की तरह वैज्ञानिक रूप भले ही न मिल पाया हो, लेकिन इतना तो निश्चित ही कहा जा सकता है कि ये प्राचीन ज्ञान हमें तत्कालीन आर्थिक क्रियाकलापों की वास्तविकता से अवगत कराते है और इस आधार पर इन्हें वैज्ञानिक विचारों की आधारशीला के रूप में स्वीकार किया जा सकता है, क्योंकि अतीत ही वर्तमान को जन्म देता है। यदि प्राचीन आर्थिक विचारों की अवहेलना कर दी जाय तो निश्चित ही आर्थिक भूगोल का इतिहास अधूरा रह जायेगा।

प्राचीन आर्थिक भूगोलवेत्ता :-

वृहस्पति :-

प्राचीन भारतीय आर्थिक भूगोल वेत्ताओं में आचार्य वृहस्पति का महत्वपूर्ण स्थान है। इनकी विद्वता के कारण ही इन्हें 'देवगुरू' की उपाधि से विभूषित किया गया है। प्राप्त प्रमाणों के आधार पर आचार्य वृहस्पति को प्राचीन आर्थिक भूगोल वेत्ताओं में सबसे अग्रज गाना जाय तो कोई अतिशयोक्ति न होगी।

वृहस्पति ने मुख्य रूप से दो ग्रन्थों की रचना की थी, जिनमें उनके आर्थिक भूगोल से सम्बन्धित विचार भरे पड़े हैं। ये दो ग्रन्थ निम्न लिखित है

1. वृहस्पति सूत्र (बार्हस्पत्यम सूत्रम्).
2. वृहस्पति स्मृति

वृहस्पति सूत्र' वृहस्पति अर्थ शास्त्र के नाम से भी जाना जाता है। जिसके सन्दर्भ में डॉ० काशी प्रसाद जायसवाल का भी कहना है कि बार्हस्पत्य अर्थशास्त्र कौटिल्य के लिए भी प्राथमिक महत्त्व का ग्रन्थ था[i] यह ग्रन्थ आर्थिक एवम् राजनीतिक दोनों दृष्टियों से काफी महत्वपूर्ण है।

आचार्य वृहस्पति ने अपने ग्रन्थों में आर्थिक भूगोल से जुड़े अनेक पक्षों का विषद विवरण प्रस्तुत किया है। जिसमें खास तौर से तृतीयक एवम् चतुर्थक आर्थिक क्रियाओं का विशेष वर्णन किया गया है। इस प्रकार स्पष्ट है कि आचार्य बृहस्पति एक प्राचीन आर्थिक भूगोलवेत्ता थे जिनके द्वारा प्रस्तुत मान्यताओं की प्रासंगकिता आज भी कायम है।

"आचार्य शुक्र" :-

आचार्य शुक प्राचीन भारतीय नीति शास्त्री होते हुए भी आर्थिक नितियों के प्रतिपादक माने जाते हैं। उन्होंने अपने ग्रन्थों में नीति विषयक ज्ञान के साथ-साथ आर्थिक नियमों का विशिष्ट रूप से विवेचन किया है। आचार्य शुक ने राजा के कर्तव्य एवम् उत्तराधिकार के साथ-साथ आर्थिक व्यवस्था को भी समूचित ढंग से वर्णन किया है। उनका प्रमुख ग्रन्थ शुक्र नीति' है। इस शुक्र नीति में आर्थिक भूगोल से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों का विवेचन किया गया है। आचार्य शुक ने प्रमुख रूप से भूमि से सम्बन्धित सभी कार्य एवं व्यापार तथा वाणिज्य आदि का विशेष रूप से वर्णन प्रस्तुत किया है, जो आर्थिक भूगोल का एक पक्ष है।

आर्थिक भूगोल का एक मुख्य पहा भू-उपयोग है। भूमि एवम् भूमि उपयोग पर आचार्य शुक ने विशेष बल दिया है तथा भूमि का आवंटन करने का अधिकार राजा के पास सुरक्षित रखा है। राजा को बिना कर दिये दो अंगुल भूमि न देने का आदेश दिया गया है। किसानों को उतनी ही भूमि दिया जाय जितनी उसकी जिविका के लिए आवश्यक है। राजा को समुचित कर लेने की व्यवस्था थी[ii]। भूमि आवंटन के लिए कठोर नियम अपनाएँ गये थे और प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह आवश्यक था कि वह जितनी भूमि कृषि के लिए ले उसका कर राजा को अवश्य दें। आचार्य शुक ने कृषि को इसलिए महत्व दिया है कि जिस राष्ट्र में कृषि अधिक होगी, वह राष्ट्र उतना ही अधिक विकसित होगा। आचार्य शुक ने पृथ्वी को सभी धनों की खान माना है।

'कामन्दक :-

आचार्य कामन्दक नीति विषयक होते हुए भी आर्थिक, विचारों के भी ज्ञाता थे। अपने प्रमुख ग्रन्थ 'कामन्दकीय नीति सार' में आर्थिक व्यवस्था से जुड़े सभी पक्षों का वर्णन प्रस्तुत किया है आर्थिक भूगोल से जुड़े भूमि, आय-व्यय कर श्रमिक, प्राथामिक एवम् चतुर्थक कार्यों का विशेष उल्लेख हुआ है, जो आर्थिक भूगोल के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है।

आचार्य कामन्दक ने भूमि पर अधिक बल देते हुए कहा है कि यदि भूमि अच्छी है, यानि जितनी ही उपजाऊ होगी, उतनी ही ज्यादा पैदावार होगी जो कि राष्ट्र के विकास के लिए अत्यन्त उपयोगी होती है। उनका कहना है कि भूमि के द्वारा ही फसले, खाने एवम् रत्नादि धातुओं की खोज की जाती हैं। इन सभी धातु एवं फसलों से आर्थिक सुदृढ़ता प्राप्त होती है। पृथ्वी पर वन है तो उससे प्राप्त जड़ी-बूटियों आदि से औषधियों का निर्माण होता है तथा वृक्षों से आने वाली आय राष्ट्र की सम्पन्नता और समृद्धि की ओर बढ़ाती है[iii]।

आचार्य कामन्दक ने भूमि को अधिक से अधिक महत्व दिया था, क्योंकि उनका मानना था कि भूमि के अन्दर विभिन्न प्रकार की धातुए एवम् उर्वरा शक्ति निहित हैं। वे भूमि के अन्दर छुपे तत्वों को खोज करने के पक्ष में थे तथा उनका विश्वास था कि राष्ट्र की आर्थिक सम्पन्नता को सुदृढ़ करने का एक मात्र संसाधन भूमि ही हो सकती हैं।

'आचार्य कौटिल्य':-

आचार्य कौटिल्य का नाम प्राचीन आर्थिक नीतिकारों में सर्वोपरि है। आचार्य कौटिल्य ने आर्थिक नीतियों का जिस सूक्ष्मता एवम् गहनता से अध्ययन किया है, उतना शायद ही किसी अन्य विद्वानों द्वारा किया गया है। आचार्य कौटिल्य जो आर्थिक नीति निर्धारण किये है उनका प्रयोग आज की परिस्थितियों में भी खरा उतरता है।

आचार्य कौटिल्य द्वारा प्रस्तुत आर्थिक नीतियों एवम् अर्थव्यवस्था सम्बन्धी नियमों एवम् तथ्यों के अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आचार्य कौटिल्य प्राचीन कालीन एक महान भूगोल वेत्ता थे।

आचार्य कौटिल्य ने अपने मुख्य ग्रन्थ कौटिल्य अर्थशास्त्रम् में कृषि को सबसे महत्व दिया है। क्योंकि कृषि ही आर्थिक व्यवस्था को सुदृढ एवम् सम्पन्नता को प्रदान करती है। कृषि से पैदा अन्न तथा उसके अंदर छुपे तत्वों की खोज से उसकी सम्पन्नता अधिक अग्रसर होती है। कौटिल्य ने कृषि के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के अन्नों की उत्पादन प्रकिया को बताया है जिसमें खाद, सिंचाई एवम् उत्पादन वृद्धि पर विशद प्रकाश डाला गया है।

उनके अनुसार बंजर भूमि पर अन्न उत्पन्न नहीं होता था तो उन्होंने बजर भूमि को 'भूमि छिद्र' कहकर पुकारा है। भूमि को किस तरह कृषि योग्य बनाया जाय इस बात की व्याख्या कौटिल्य ने की है और उन्होंने यह भी कहा है कि जो भूमि ऊसर या बंजर हो उसे चारागाह अथवा मैदान परती ही छोड़ देना चाहिए[iv]।

कालिदास :-

कालिदास को एक महान आर्थिक भूगोलवेत्ता माना जा सकता है, क्योंकि उनकी कृतियों में जुड़े विभिन्न पक्ष का विवरण मिलता है जो कि आर्थिक भूगोल का एक अभिन्न अंग है।

कालिदास ने जो कृषि व्यवस्था का जिक्र किया है उसमें वैज्ञानिकता तो नजर नहीं आती, बल्कि साधन सम्पन्न मान सकते हैं, क्योंकि समुद्र के किनारे हरे-भरे प्रफुल्लित फसलों के व्याख्या से सिद्ध होता है कि कृषकों को पूरा-पूरा यह ज्ञान हो चुका था कि कौन सी भूमि उत्पादन के काबिल है, और कौन सी मूमि उत्पादन के काबिल है और अनुत्पादन वाली भूमि को किस प्रकार उत्पादनशील भूमि बनाई जाय। यह बात प्रमाणित करता है कि कृषक को खाद एवमं सिंचाई की भी व्यवस्था की गयी थी। उस समय कृषि पूरी तरह वर्षा पर निर्भर रहती थीं[v]। कालिदास ने विभिन्न प्रकार के फसलों के उत्पादन का भी जिक किया है, जिसमें मुख्य रूप से धान की खेती तकनिकी रूप से करने का प्रमाण मिलता है[vi]।

बाल्मीकि :-

बाल्मीकि रामायण के अध्ययन से यह बात प्रमाणित हो जाती है कि प्राचीन भारत में आर्थिक भूगोल का भी विस्तृत विवरण दिया गया है। बाल्मीकि जी ने आर्थिक भूगोल से जुड़े सभी पहलुओं पर भी बल दिया है। महर्षि बाल्मीकि ने कृषि सिंचाई उद्योग, व्यापार, वाणिज्य, आदि का विवरण दिया है। उन्होनें भी आर्थिक जीवन स्तर के लिए अधिक उन्नतशील व्यवस्था प्रदान की है। उनकी मान्यता है कि एक सुशासित राज्य ही आर्थिक व्यवस्था का आधार है।

बाल्मीकि जी ने कृषि को ही आर्थिक जीवन की सुदृढ़ता का मूल कहा है। बिहार के मलद और कुरूष प्रदेश किसी समय दीर्घ काल तक बहुत ही समृद्ध शाली और धन्य-धान्य से सुखी थे। किन्तु राक्षसी तारका के आतंक से सब समृद्धि नष्ट हो गयी तथा एक विरान प्रदेश में परिवर्तित हो गये थे।

बाल्मीकि जी कहते है कि उस समय वर्षा समय पर तथा आवश्यक मात्रा में होती थी, जिससे खेत अनाज से मरे पुरे थे, तथा पृथ्वी पके धान से युक्त और सभी प्रकार की औषधियों से सम्पन्न थी[vii]। शरद ऋतु के अंत में पृथ्वी धान की पकी फसलों से माला युक्त जान पड़ती थी और देश की खाद्य पूर्ति परिपूर्ण हो जाती थी। शिशिर ऋतु में कहीं ज्वार और गेहूं के आवरण से छाये हुए खेत, सूर्य निकलने के समय पक्षियों एवम् सारस के चट्टानों से यह प्रतीत होते थे कि कही चावल के पौधे, जिनको धान भरी सुनहरी वाले खजुर के फलों के तरफ जान पड़ती थी।

कृषि प्रधान क्षेत्र देहात ग्राम कहे जाते थे तथा बड़े शहर, जहाँ ग्रामों की कृषि सम्पत्ति जाकर विकती थी नगर कहलाते थे। वन जाते समय राम ऐसे गाँवों से होकर निकले थे, जिनकी सीमा जुते हुए खेतों वाली थी। राम के बन जाते समय लोगों ने कहा था कि हम अपने खेतों घरों और बगीचों को छोड़कर राम का अनुगमन करेगें[viii]।

बाल्मीकि जी कथन है कि प्राचीन समय में खेतों की सिंचाई मुख्यतः वर्षा के जल पर निर्भर रहती थी। इस बात का प्रमाण वर्षा की प्रतीक्षा करते हुए किसानों से सम्बन्धित अनेक उपमाओं एवम् उत्प्रेक्षाओं के प्रयोग से प्रकट है[ix]।

निष्कर्ष :-

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि प्राचीन भारत की भौगोलिक स्थिति अत्यधिक सुदृढ़ और सुशासित थी। प्राचीन काल में बड़े-बड़े ऋषि मुनियों ने प्राकृतिक स्वरूप की ओर प्रमुखतः ध्यान दिया था। और उसकी शक्ति व समृद्धि को बनाए रखने के लिए विभिन्न प्रयास किए थे। हमारे प्राचीन धर्म शास्त्रों में भी प्रकृति के संरक्षण को लेकर अनेक प्रकार के उदाहरण जीवंत है और इसी के साथ साथ प्राचीन साहित्यकारों ने भी आर्थिक भौगोलिक स्थिति को लेकर अनेक प्रकार के वर्णन प्रस्तुत किए हैं। जो उनके प्रकृति प्रेमी होने की सूचना देते हैं और आर्थिक भौगोलिक स्थिति के प्रति चेतनता को प्रदर्शित करते हैं।

REFERENCES:

1. जायसवाल, डॉ० के० पी० 'हिन्दु पोलिटी' पृ० 71
2. न दद्यात् द्वियंगुलमति भूमेः स्वत्व निवर्तकम्, वृत्यर्थ कल्पयेद्वपि यावद्ग्रहास्तु जीवति॥ शुक्र नीति, अध्याय 1. श्लोक 2111
3. तृतीयांश्चतुर्थांश मर्घांशतु हरेत्फलं, षष्ठांश मुखतइत्यागादि समाकुलात्॥ शुक्र नीति, अध्याय 4 श्लोक 2371; त्रिपाठी, डॉ० राम नरेश (1981) प्राचीन भारतीय आर्थिक विचार, बोहरा पब्लिकर्स, इलाहाबाद, पृ. (291-92)।
4. अकृष्या भूमि पशुभ्यो विवीतानि प्रयच्छेत्। कौटिल्य अर्थशास्त्रम्, अध्याय 2 अधिकरण 211|
5. त्वययात कृषिफलमिति भ्रुविलासान भिशैः प्रतिस्निग्धैर्जन पदवधूलोचनैः पीय मानः। स सीरीत्कषण सुरभि क्षेत्रमारुह्यमालं किचित्पश्चाद् व्रज लघुगति भूर्य एवोत्तेरण पूर्वमेघ श्लोक 161
6. आपादपद्रम प्रणयाः कलमा इवते रघुम् फलेः संवर्धया मासुरूत्खात प्रतिरोपितः। रघुवंश, सर्ग 4 श्लोक 37:
7. वाल्मीकि रामायण - 7/41/20, 7/99/12, 6/128/1-2, 7/70/10, 3/16/17
8. उद्यानानि परित्यज्य क्षेत्राणि च गृहाणि, वाल्मीकि रामायण- 2/33/17
9. त्यामेव ही प्रतीक्षन्ते पर्जन्यमिव कर्षकाः , वाल्मीकि रामायण- 2/112/12.2/32/13